ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-11* February- 2019
Anthology : The Research

भारतीय मनीषा और शिक्षा

जगदीश चन्द्र आमेटा
व्याख्याता,
भाषा विभाग,
विद्या भवन गो.से. शिक्षक महाविद्यालय,
उदयपुर

सारांश

सारी सृष्टि में व्यक्ति ही विवेकयुक्त प्राणी है। अपनी विवेकशीलता से ही उसने 'आदमी' से 'मानव' तक की यात्रा की है। उसके पास बुद्धि का अक्षय कोश है। अपनी बुद्धि का सफलतर अनुप्रयोग करके ही वह पुश–वर्ग से कई दृष्टियों में श्रेष्ठ सिद्ध हुआ है, अपने बुद्धि–बल के अवलम्ब से ही वह वर्तमान में रहता हुआ भूत और भविष्य में विचरण करता है। क्या पाया और क्या पाना शेष रहा, इस पर शांतिपूर्वक विचार करता है और अपने हेतु एक निरापद पथ का निदान करता है। यह सब बुद्धि के वरदान से ही संभव होता है। बुद्धि को पैना और परिमार्जित शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। शिक्षा ही व्यक्ति को संवेदनशील बनाकर सामाजिकता का पूरा पाठ पढ़ा सकती है। शिक्षा ही एकमात्र संसाधन है, जिससे व्यक्ति न केवल 'मानव' होने का गौरव पा सकता है, अपितु देवत्व की विशिष्टता से भी सुशोभित हो सकता है।

मुख्य शब्द : मनीषा– बुद्धि, चिंतन, प्रज्ञा; शिक्षा– अध्ययन–अध्यापन, विद्या।

प्रस्तावना

शिक्षा और दर्शन अभिप्रेत की दृष्टि से अन्यान्याश्रित हैं। एक को पूर्णतः समझने के लिए अन्य को जानना अपरिहार्य है। शिक्षा को दिशा दर्शन ही देता है तो दर्शन के अस्तित्व–सृजन में शिक्षा का योग है। भले ही शिक्षा का दर्शन ही पथ प्रशस्त करता है; किन्तु दर्शन स्वयं भी शिक्षा–प्रस्तुत है।

जहाँ तक भारतीय मनीषा की बात है, इसने शिक्षा पर गंभीरता से विचार किया है। शिक्षा के उद्देश्य तय करने में स्पष्ट दिशा–निर्देश दिये हैं। 'सा विद्या या विमुक्तये' का कथन दर्शन से ही शिक्षा में आया है। सचमुच, दर्शन ही शिक्षा को मार्ग दिखाता है; परंतु यह तय है कि दर्शन का संप्रत्यय भी शिक्षा से खूब प्रभावित होता है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. भारतीय चिंतन में शिक्षा के अभिप्रेत को स्पष्ट करना।
2. भारतीय चिंतन के विविध शैक्षिक दृष्टिकोणों पर प्रकाश डालना।
3. भारतीय मनीषा के समान शैक्षिक दृष्टिकोणों को आलोकित करना।
4. भारतीय मनीषा के विविध शैक्षिक दृष्टिकोणों में अंतर प्रतिस्थापित करना।

वेद और उपनिषद्

वैदिक और उपनिषद् काल में ऋषियों–मुनियों ने शिक्षा द्वारा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर बल दिया है। इस काल में शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक जानकारियाँ देना न होकर शारीरिक–मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना था। शिक्षा का उच्चतम उद्देश्य अध्यात्म की उन्नति करना था। गुरू अपने शिष्यों को अध्यात्म के रहस्यमय तथ्यों की अनुभूति कराने हेतु दिशा–निर्देश देते थे। जीवन के उच्चतम स्तर के लिए स्वयं अपना आदर्श भी प्रस्तुत करते थे। शिष्य स्वयं अनुभूत होकर सीखते थे। प्राचीन काल में शिक्षा प्रदान करने के लिए संस्थाओं के रूप में आश्रम, गुरूकुल, मठ, संघ और परिषद् हुआ करती थीं।

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिष्यों को अनुशासन की अनुपालना कठोरतापूर्वक करनी होती थी। शिक्षा–प्रणाली में शास्त्रार्थ अर्थात् वाद–विवाद को विशेष महत्त्व दिया जाता था। जहाँ तक प्राचीन काल की बात है, इसमें स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का निषेध नहीं था, अतएव

अनेकानेक स्त्रियाँ दार्शनिक विषयों में दक्ष थी और पुरुषों से शास्त्रार्थ करती थीं। उपनिषद् में 'विद्यया अमृतमश्नुते' का उल्लेख मिलता है, जिसका अभिप्रेत है कि विद्या से अमरत्व की प्राप्ति होती है। सरल शब्दों में कह सकते हैं कि उपनिषद् काल में शिक्षा द्वारा सभी बंधनों से मुक्ति की बात कही गई है – सा विद्या या विमुक्तये।

श्रीमद्भगवद्गीता

'विमूढा नानुपश्यन्ति, पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः'

अर्थात् मोहग्रस्त प्राणी अन्तरात्मा के दर्शन नहीं कर सकते, इस हेतु तो प्रज्ञाचक्षु चाहिए। गीता में शिक्षा का प्रधान उद्देश्य प्रज्ञाचक्षु खोलना बताया गया है, जिससे व्यक्ति सर्वत्र व्याप्त परमेश्वर के दर्शन कर सकें। गीता की एक प्रमुख शिक्षा निष्काम भाव की भी है।

निष्काम भाव के बारे में गीता में विस्तारित वर्णन है। जिसका संक्षेपण करते हुए कहा जा सकता है कि गीतानुसार कोई व्यक्ति निष्काम भाव से युद्ध करें, तब भी पुण्य मिलेगा। इसके विपरित कोई सकाम भाव से सोया–पड़ा रहे, तब भी पाप लगेगा। गीता में निष्काम कर्म का स्पष्ट निर्देश है।

जैन दर्शन

जैन दर्शन ने भी 'मुक्ति' को शिक्षा का सर्वोच्च उद्देश्य कहा है। इस दर्शनानुसार आत्मा और पुद्गल (मैटर) के मध्य भेद नहीं करके उन्हें एक मान लेना ही बंधन है। जीव का पुद्गल से संयोग बंधन है तो इसका वियोग मुक्ति है। शिक्षा का प्रधान उद्देश्य जीव और पुद्गल के भेद का बोध करना है। यह दर्शन शिक्षा–प्राप्ति हेतु कठोर अनुशासन अनिवार्य मानता है। शिक्षा की पात्रता हेतु व्यक्ति का अहंकार शून्य होना अनिवार्य है। प्रमाद, क्रोध और अस्वस्थता भी शिक्षा प्राप्ति में बाधक है। इसके विपरित अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और धर्म आदि शिक्षा के लिए अनिवार्य शर्तें है।

बौद्ध दर्शन

गौतम बुद्ध को वृद्धावस्था और मृत्यु के दृश्यों को देखने से यह प्रतीति हुई कि संसार में दुःख ही दुःख है। उन्होंने सन्यास ग्रहण करके दुःखों से मुक्ति का उपाय खोजने का यत्न किया। बौद्ध दर्शन विशेष रूप से दुःखवादी है। इसके अनुसार अज्ञान ही दुःखों का कारण है। शिक्षा द्वारा अज्ञान को दूर करके दुःखों का अन्त किया जा सकता है।

बुद्ध दर्शन का प्रधान ध्येय प्राणी की दुःखों से मुक्ति है। दुःख प्रथम आर्य सत्य है। चार आर्य सत्यों के नाम है – दुःख, समुदय, दुःख मार्ग और दुःख निरोध। अंतिम आर्य सत्य निरोध का अर्थ है – समस्त दुःखों से मुक्ति। बुद्ध दर्शन में समस्त दुःखों से मुक्ति हेतु अष्टांग मार्ग का प्रतिपादन किया गया है। इस अष्टम मार्ग पर चलकर व्यक्ति दुःखों से मुक्त होकर निर्वाण को उपलब्ध हो जाता है।

विवेकानन्द

''शिक्षा मनुष्य में निहित पूर्णता का विकास है।'' स्वामी विवेकानन्द का उक्त कथन शिक्षा के उनके मंतव्य को स्पष्ट करता है। आप वेदांत दर्शन के अनुयायी थे। अतएव इनका मानता था कि व्यक्ति में अनन्त ज्ञान और शक्ति निहित है। आवश्यकता उस शक्ति के प्रकटीकरण की है। आपने अपने इन्हीं विचारों के आधार पर ही कहा था कि शिक्षा का मुख्य धेय मनुष्य में निहित पूर्णता का विकास है। शिक्षा सूचनाओं का समुच्चय नहीं है। मात्र जानकारी शिक्षा नहीं है। इसलिए तो उन्होंने कहा था कि शिक्षा और जानकारी एक ही वस्तु होती तो पुस्तकालय सबसे बड़े संत और विश्वकोश ही ऋषि बन जाते।

स्वामी जी शिक्षा दृष्टि आदर्श और यथार्थ के समन्वय की थी। यही वजह है कि वे शिक्षा का उच्चतम उद्देश्य आध्यात्मिक विकास मानते थे तो न्यूनतम प्रयोजन जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की आपूर्ति करना स्वीकारते थे।

ठाकुर रवींद्र नाथ टैगोर

विश्व कवि रवींद्र नाथ टैगोर का यह दृढ़ अभिमत था कि ईश्वर की अभिव्यक्ति प्रकृति द्वारा ही भली प्रकार होती है। अतः विद्यार्थियों को भी शिक्षा प्रकृति की गोद में ही देनी चाहिए। प्रकृति द्वारा ही विद्यार्थी अपनी अनंत मानसिक क्षमता को पहचान पाता है। उनका मानना था कि व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए तो नाममात्र की शक्ति व्यय करता है, अतः उसकी शेष सारी मानसिक शक्ति सृजनात्मक कार्यों में खर्च होनी चाहिए। ऐसा होने पर ही व्यक्ति समस्त जीवों के प्रति एकात्म का बोध करेगा और यह परमात्मा के निकट जाने का पथ कहलाएगा।

टैगोर की दृष्टि में शिक्षार्थी को पूर्ण स्वतंत्रता देनी चाहिए। स्वतंत्रता से विद्यार्थी को 'स्व' का बोध होता है। जिसे 'स्व' का बोध हो जाता है, वह पथभ्रष्ट हो ही नहीं सकता।

महात्मा गाँधी

महात्मा गाँधी का शिक्षा के उद्देश्य को लेकर स्पष्ट अभिमत था। वे कहा करते थे कि शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास करना है। इससे जीवन के अंतिम लक्ष्य 'सत्य' की अनुभूति की जा सकें।

गाँधी जी आदर्शवादी होने के साथ–साथ पूर्णतः व्यवहारवादी भी थे। इसलिए वे शिक्षा का

प्राथमिक उद्देश्य जीविकोपार्जन मानते हैं तो उच्चतम उद्देश्य ईश्वर से साक्षात्कार करना कहते हैं। इन्हीं उद्देश्यों के बीच में एक उद्देश्य है – चरित्र निर्माण। चरित्र में उन्होंने सत्य–अहिंसा पर बल दिया है। यह सत्य–अंहिसा मन, वचन और कर्म तीनों दृष्टियों से आवश्यक है।

निष्कर्ष

भारतीय शिक्षा पर सद्ग्रंथों – वेद–उपनिषद् और भगवद् गीता आदि का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। महापुरुषों – स्वामी विवेकानन्द, टैगोर और महात्मा गाँधी आदि की छाप भी स्पष्ट है तो धर्मों – जैन और बौद्ध आदि के तत्व भी विद्यमान हैं।

जहाँ तक आध्यात्मिकता की बात हैं, यह हमारी शिक्षा–मनीषा का अभिन्न अंग हैं। जीवन की आध्यात्मिक उन्नति मनीषा में गहनतम है, वहीं से प्रकट होकर शिक्षा में प्रवाहित होती है। मूल्यों की नज़र से भी हमारी शिक्षा–मनीषा अद्भूद् है, इसमें कोई संशय नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *शर्मा, डॉ. रामनाथ, प्रमुख भारतीय शिक्षा दार्शनिक,संस्करण 1996, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।*
2. *ओड़, डॉ. लक्ष्मीलाल के., शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि,संस्करण 2011, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।*
3. *सक्सेना, एन.आर. स्वरूप सिंह, डॉ. हरिशंकर, शिक्षा के दार्शनिक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, संस्करण 2016, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।*
4. *पाण्डेय, डॉ. रामशकल, भारतीय शिक्षा दर्शन, संस्करण 2009, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।*